अगस्त १९९७ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

धर्म वाहिनी सघन तश्तरी

(सी.डी.-रोम)

जब कोई व्यक्ति विपश्यना साधना के अभ्यास से यहीं इसी जीवन में प्रत्यक्ष लाभान्वित होता है तो उसके मानस में भगवान गौतम बुद्ध के प्रति सहज स्वाभाविक कृतज्ञताभरी श्रद्धा जागती है। २६ शताब्दी पूर्व उन्होंने ही भारत की इस चिर-विस्मृत पुरातन विद्या को खोज निकाला था और बहुजन हित-सुख के लिए इसे सर्वसुलभ बनाया था। जब किसी के मन में बुद्ध के प्रति श्रद्धा जागती है तो स्वभावतः भारत की पावन धरती के प्रति भी श्रद्धा जागती है, क्योंकि समय-समय पर यहीं लोक कल्याण के लिए किसी बुद्ध का और विपश्यना साधना का उद्गम होता है।

मेरे परम पूज्य गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन के हृदय में भी बुद्ध के साथ-साथ भारत के प्रति अत्यंत श्रद्धा और कृतज्ञता के भाव विद्यमान थे। उन्हें इस बात का गहरा दुख था कि भारत आज इस कल्याणी विपश्यना विद्या से सर्वथा वंचित है, जिसकी कि आज की दयनीय स्थिति में उसे महती आवश्यकता है। उनकी मान्यता थी कि ब्रह्मदेश पर भारत का सदियों पुराना अनर्घ ऋण है जिसे कि वे स्वयं भारत आकर चुकाया चाहते थे। वे चाहते थे कि भारत में विपश्यना का पुनरावर्तन हो। विपश्यना का अनमोल रत्न भारत को वे स्वयं भेंट देना चाहते थे। परंतु हजार चाहते हुए भी किन्हीं अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण वे स्वयं भारत नहीं आ सके। इसलिए जब जून १९६९ में मेरा भारत आने का संयोग हुआ तो वे अत्यंत प्रसन्न हुए और ऋण-अदायगी का यह महत्त्वपूर्ण दायित्व उन्होंने मुझे सौंपा। मैं अपनी सामर्थ्य-सीमा को खूब समझता था। अतः मन में एक झिझक थी। परंतु उन्होंने आश्वासनभरे शब्दों में मेरे मानस को अपूर्व ढाढस बँधवाया। उन्होंने कहा कि अब विपश्यना का डंका बज चुका है। भारत की यह अनमोल विद्या भारत में पुनः जागेगी। आज के भारत में ऐसे अनेक लोग हैं जो कि कई जन्मों से संग्रहीत विपुल पुण्य पारमी के धनी हैं। चित्त-विशोधन के लिए यह आशुफलदायिनी वैज्ञानिक विद्या वहां के अनेक समझदार लोगों को आकर्षित करेगी और वे इसे सहर्ष स्वीकार करेंगे।

उनकी यह मान्यता सत्य सिद्ध हुई। करोड़ों की आबादी वाले इस देश के लिए मैं एक सर्वथा अपरिचित व्यक्ति था। तिस पर भी विपश्यना के शिविर पर शिविर लगने लगे और इस देश में सार्वजनीन लोक कल्याण के मंगल प्रभात का उदय हुआ।

मैं इस सच्चाई को अच्छी तरह समझता था कि भारत के लोग तथागत बुद्ध की सही शिक्षा को विपश्यना के प्रयोगात्मक अभ्यास द्वारा ही समझेंगे और स्वीकारेंगे। इस विद्या के सैद्धांतिक पक्ष को समझाने का प्रयत्न निष्फल साबित होगा। बल्कि अप्रासंगिक दार्शनिक वाद-विवादों से सारा वातावरण द्वेष दौर्मनस्यता से प्रदूषित हो उठेगा। लोग विपश्यना का अभ्यास करके जब तथागत की कल्याणी शिक्षा को स्वयं अनुभूति पर उतार कर देखेंगे और उसका रस यहीं इसी जीवन में चखेंगे तो सारे निरर्थक विवाद त्याग कर इसे सहर्ष स्वीकार करेंगे।

मैं स्वयं बर्मा में एक अत्यंत कट्टर सनातनी हिंदू परिवार में जन्मा और पला था। विपश्यना के केवल सैद्धांतिक पक्ष के विषय में पढ़-सुन कर मैं इस कल्याणकारी पथ पर न कभी चल पाता और न ही अपने मनोविकारों से उत्पन्न भयंकर पीड़ाओं से कभी विमुक्त हो पाता। विपश्यना के स्वानुभूतिजन्य अभ्यास ने ही मुझे आकर्षित किया और मैं धर्म के सत्य सार को सांप्रदायिकता के छिलकों से अलग कर यथार्थतः समझ सकने योग्य बना।

ये कुछ एक ऐसी सच्चाइयां हैं जो मेरे लिए इतनी प्रभावशाली साबित हुईं और जिनके कारण मैं अपने गुरुदेव और उनकी सिखाई हुई विपश्यना विद्या की ओर चुंबक की तरह खिंचा चला गया।

(क) –विपश्यना एक ऐसी आशुफलदायिनी विद्या है जिसके अभ्यास द्वारा यहीं शुभ परिणाम मिलने आरंभ हो जाते हैं। साधक को किसी अगले जीवन के अनजाने भविष्य में मिलने वाले फल के आश्वासन के भरोसे निरर्थक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती।

(ख) – यद्यपि तथागत बुद्ध की शिक्षा को लोगों ने आगे जा कर एक से भी अधिक संप्रदायों में बांध दिया परंतु उन्होंने जो मूलतः सत्य धर्म सिखाया उसे मैंने सांप्रदायिकता से सर्वथा विमुक्त पाया। यह सच्चाई मुझे अपने पहले दस दिन के शिविर में ही अत्यंत स्पष्ट हो गयी, जो कि किसी भी समझदार साधक को स्पष्ट हो ही जाती है। विपश्यना साधना का यह लक्ष्य कदापि नहीं है कि वह साधक को किसी एक व्यवस्थित संप्रदाय से किसी अन्य व्यवस्थित संप्रदाय में दीक्षित करे।

(ग) – मैं अपने पूज्य गुरुदेव के प्रति कदापि आकर्षित नहीं होता यदि मेरे मन में रंचमात्र भी ऐसा संदेह जाग पाता कि ये मुझे किसी विशिष्ट संप्रदाय में दीक्षित कर रहे हैं। मैंने देखा कि उनके प्रशिक्षण का एक मात्र लक्ष्य यही था जो कि तथागत बुद्ध का था और वह यह कि साधक अपने मानसिक विकारों से और तज्जन्य दुःखों से विमुक्त हो जाय।

(घ) – मेरे गुरुदेव बार-बार इस बात को दुहराते थे कि कोई व्यक्ति किसी भी जाति, वर्ग, संप्रदाय या परंपरा का हो, यदि वह तथागत बुद्ध द्वारा सिखायी गयी शील, समाधि और प्रज्ञा की शिक्षा का अभ्यास करता है तो निश्चित रूप से लाभान्वित होता ही है। इसके लिए उसे अपने नाम के साथ कोई नया लेबल लगाने की आवश्यकता नहीं होती। लेबल हजार लगा लें पर धर्म धारण न करें तो रंचमात्र भी लाभ नहीं होगा।

(ङ) – मैंने देखा कि विपश्यना सभी दार्शनिक मान्यताओं के मिथ्या विवादों से दूर एक व्यावहारिक विद्या है। जीवन जीने की एक उत्कृष्ट कला है। यह हमें निर्दोष और स्वस्थ जीवन जीना सिखाती है। इसके अभ्यास द्वारा कोई भी व्यक्ति मनोविकारों के

स्वभाव शिकंजेसे मुक्त होना सीखता है। ऐसा दूषित स्वभाव जिसके कारणव्यक्ति स्वयं भी दुखी रहता है तथा औरों के लिए भी दुख का ही सृजन करता रहता है। इस स्वभाव शिकंजेसे उन्मुक्त होकर वह अपने भीतर स्वयं सुख-शांति का जीवन जीता है तथा औरों के लिए भी सुख-शांति का स्वस्थ वातावरण निर्माण करता है। सचमुच विपश्यना सुखी जीवन जीने की एक प्रभावशाली विद्या है।

(च) – इस विद्या द्वारा साधक अपने चित्त और शरीर के पारस्परिक संबंधों का वैज्ञानिक रूप से विश्लेषण तथा अध्ययन करता है और देखता है कि नितांत नासमझी द्वारा किस प्रकार अंतर्मन की तलस्पर्शी गहराइयों में विकार पर विकार उत्पन्न हुए जा रहे हैं, उनका संवर्धन हो रहा है और परिणाम स्वरूप अपने लिए प्रभूत पीड़ाओं का सृजन हो रहा है। इन सच्चाइयों का तटस्थ भाव से निरीक्षण करते-करतेसाधक अपने दूषित स्वभाव-शिकंजे का और उससे उत्पन्न होने वाले दुखचक्र का भंजन कर लेता है।

(छ) –इस अभ्यास में न किसी अंधविश्वास का आरोपण है, न किसी दार्शनिक अंध मान्यता का बंधन है और न ही किन्हीं सांप्रदायिक कर्मकांडोंकी जकड़न। यह साधना साधक को किसी बाह्य अदृश्य शक्ति पर आश्रित रहने की अंध परंपराओं से मुक्ति दिलाती है और स्वावलंबी बनाती है। यहां तक कि दुख-विमुक्ति के लिए अपने आचार्य तक पर आश्रित होना नहीं सिखाती। जैसे कि भगवान बुद्ध ने कहा आचार्य तो केवल मार्गदर्शक होता है। हर व्यक्ति कोअपनी विमुक्ति के लिए स्वयं ही परिश्रम करनापड़ता है।

(ज) – यह विद्या साधक को धर्म के नाम पर प्रचलित वर्ण-गोत्र, जाति-पांति और ऊंच-नीच के मिथ्या विभाजनों से ऊपर उठाती है। दुर्भाग्यवश आज का भारत इन विनाशकारी अप्राकृतिक विभाजनों में बँटा हुआ है और पारस्परिक द्वेष-दौर्मनस्य तथा विग्रह-वैमनस्य से बुरी तरह संतापित है। ऐसे दुखग्रस्त भारत के लिए यह सांप्रदायिकताविहीन वैज्ञानिक पथ अत्यंत अनुकूलहै, समीचीन है, लाभदायी है।

सन १९६९ में मेरे भारत आने पर प्रारंभ में मैंने भारत से विलुप्त हुए पुरातन पालि साहित्य को प्रकाश में लाने का कोई प्रयत्न नहीं किया।मैंने अपना सारा श्रम और समय विपश्यना के विकासमें ही लगाया। यह निर्णय ठीक ही रहा। आज के इस देश के लिए सर्वथा अपरिचित होने पर भी विपश्यना विद्या इतनी शक्तिशाली साबित हुई कि इसने केवलभारत के ही नहीं, बल्कि सारे विश्व के अनेक लोगों को अपनी ओर खैंच लिया।

अनेक संप्रदायों, मान्यताओं और परंपराओं के लोग विपश्यना के शिविरों में आकर अमृत रसपान करने लगे। हिंदू, बौद्ध, जैन, सिक्ख, मुस्लिम, ईसाई आदि विभिन्न संप्रदायों के सामान्य गृहस्थ ही नहीं बल्कि इनके अनेक गृहत्यागी आचार्य और अग्रगण्य नेता शिविरों में भाग लेने लगे। विपश्यना साधना के कारण ही तथागत बुद्ध कीसही शिक्षा अपने उद्गम के इस देश में तथा अन्यान्य विदेशों में भी शीघ्र गति से फैलनेलगी। उच्च वर्गीय और निम्न वर्गीय, धनी और निर्धन, शिक्षित और अशिक्षित, युवा और वृद्ध –समाज के हर तबके के लोग शिविरों में शामिल होने लगे। झोपड़पट्टियों में रहने वाले अत्यंत निर्धन लोग शीर्षस्थ उद्योगपतियों के साथ बैठ कर विपश्यना का अभ्यास करने लगे। नितांत अनपढ़ किसान और मजदूर विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक, डॉक्टर, इंजीनियर, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, प्रमुख वकील, उच्च श्रेणी के सरकारी अधिकारी और पुलिस के अफसर एक साथ शिविरों में भाग लेने लगे। कारागृह के ऊंचे अधिकारी बड़ी संख्या में कैदियों के साथ सम्मिलित होने लगे। स्कूल और कॉलेज के विद्यार्थी बहुत बड़ी संख्या में अपने अध्यापकों के साथ विपश्यना विद्या से लाभान्वित होने लगे। सब ने विपश्यना को स्वीकार किया।

पुरातन भारत की स्वस्थ परंपरा कोनिभाते हुए विपश्यना की शिक्षा निःशुल्क दी जाती है। यहां तक कि आवास और भोजन भी निःशुल्क दिया जाता है। साधकोंमें जो समर्थ हैं वे स्वैच्छा से पर्याप्त मात्रा में दान देते हैं जिससे कि भारत में और विदेशों में ५० विपश्यना केंद्रों का निर्माण हो सका है, जहां प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में मुमुक्षुओं को धर्मलाभ मिल रहा है। ४०० से अधिक आचार्य और सहायक आचार्य तथा बाल-शिविरों के लगभग ३०० शिक्षक विपश्यना और आनापान सिखाने के लिए प्रशिक्षित किये गये हैं। ये सभी निःस्वार्थभाव से सेवा करते हैं। शिविरार्थियों से अथवा संचालकों से कोई पारिश्रमिक नहीं लेते। इस प्रकार विपश्यना का धर्मचक्र न केवल भारत में बल्कि विश्व के छहों महाद्वीपों के अनेक देशों में विशुद्ध रूप से प्रवर्तमान हो चुका है।

यों सोलह वर्षों तक अपनी सारी शक्ति विपश्यना के प्रशिक्षण में लगाने के पश्चात मैंने अनुभव किया कि अब समय पक गया है जबकि विपश्यना के सैद्धांतिक पक्ष को उजागर करनेवाली भगवान बुद्ध की वाणी और तत्संबंधित भाष्य व टीकाओं का विपुल पालि साहित्य प्रकाश में लाया जाय। जब सैंकड़ो आचार्य और स.आ. निष्ठापूर्वक विपश्यना के प्रचार-प्रसार में लग गये तब मैंने कुछ समय और शक्ति पालि साहित्य के प्रकाशन में लगानी आरंभ की। पिछले बारह वर्षों में इस क्षेत्र में बहुत संतोषजनक काम हुआ है। सन १९८५ में धम्मगिरि पर **'विपश्यना विशोधन विन्यास'** की स्थापना की गयी। लगभग बीस विद्यार्थियों को बर्मी लिपि सिखायी गयी ताकि वे उस समस्त पालि साहित्य का नागरी में लिप्यांतर कर सकें जो कि इस देश से लुप्त हो चुका था, जिसे पड़ोसी ब्रह्मदेश ने अपने शुद्ध रूप में संभाल कर रखा था और जिसे मैं वहां से भारत ले आया था। जिन्हें पालि भाषा सीखने की रुचि थी उन विद्यार्थियों के लिए पालि प्रशिक्षण का भी प्रबंध किया गया। धम्मगिरि पर वि.वि.वि. द्वारा १० मूर्धन्य भारतीय पालि विद्वानों को नियुक्त किया गया, जिनमें से कुछएक ने डॉक्टरेट कर रखी है और कुछ 'नव नालंदा महाविहार' के पालि शोध संस्थान में निदेशक और प्राचार्य भी रह चुके हैं। इन विद्वानों के सहयोग से पालि तिपिटक और उसके भाष्य व टीकाओं के प्रकाशन का काम आरंभ किया गया। बर्मा में भी धर्माचार्य के स्तर के १० मूर्धन्य पालि विद्वानों को इस काम के लिए नियुक्त किया गया ताकि वे प्रकाशन में कोई अशुद्धियां न रहने दें। अब तक ५५ पुरातन ग्रंथ प्रकाशितहो चुके हैं और ९१ ग्रंथों का मुद्रण-कार्यचल रहा है। विश्वास है इस वर्ष के

अंत तक इनका प्रकाशन पूर्ण हो जायगा।

इस महान योजना के लिए एक दर्जन से अधिक उच्चकोटि के आधुनिकतम कंप्युटर, प्रिंटर, कॉपियर तथा अन्य आवश्यक यंत्र उपलब्ध किये गये। पर्याप्त संख्या में कंप्युटर संचालन के प्रवीण टेक्नीशियन तथा प्रोग्रामर्स नियुक्त किये गये। उनमें से अनेकों को ऊंची वेतन दी जा रही है, परंतु कुछ एक प्रमुख टेक्नीशियन ऐसे भी हैं जो इस पुण्य कार्य में अपनी अवैतनिक सेवाएं प्रदान कर रहे हैं। याने बीसों विद्वानों, वैज्ञानिकों तथा अन्य अनेक लोगों के सहयोग से पालि ग्रंथों के प्रकाशन के साथ-साथ **सीडी-रोम** यानी सघन तश्तरी के निर्माण की योजना भी पूर्ण होने को आयी है, जिसमें कि विपुल धनराशि लगी है, जोकि अधिकांशतः कृतज्ञ विपश्यी साधकों के अनुदान से ही प्राप्त हुई है।

वि.वि.वि. द्वारा निर्मित **सघन तश्तरी** (सीडी-रोम) की कुछ एक विशेषताएं इस प्रकार हैं –

[क] –इसमें सारे विश्व द्वारा प्रमाणित माने गए छट्ठ संगायन के १४६ ग्रंथों का निवेश किया गया है। ये सारे ग्रंथ इन तीन लिपियों में देखे-पढ़े जा सकते हैं –

१. देवनागरी –यह भारत निवासियों के लिए उपयोगी होगी, जिन्होंने अपनी यह बहुमूल्य साहित्य संपदा सदियों से खो दी थी।

२. म्यंमा –यह बर्मा निवासियों के लिए उपयोगी होगी। एक प्रकार से यह उस देश के प्रति मेरी ऋण-अदायगी होगी। उस देश ने न केवल विपश्यना साधना बल्कि समग्र पालि साहित्य को अपने शुद्ध रूप में दो सहस्त्राब्दियों से अधिक समय तक सुरक्षित रखा और वहीं से मुझे ये दोनों उनमोल रत्न प्राप्त हुए।

३. रोमन –यह विश्व भर के अन्य लोगों के लिए उपयोगी होगी।

[ख] – इस समग्र साहित्य को श्रीलंका, थाई, लाओस और कंबोडिया की लिपियों में भी शीघ्र लिप्यांतरित करने की योजना है, जिससे कि उन देशों के लोग भी लाभान्वित हों, जहां पालि भाषा अनेकों द्वारा समझी जाती है।

[ग] – इस प्रकार १४६ ग्रंथों के ५२,६०२ पृष्ठों में ७४,४८,२४८ शब्दों को सँजोये हुए यह छोटी-सी सघन तश्तरी भारत की पुरातन आध्यात्मिक संपदा के विशाल साहित्य को विश्व भर के लोगों तक पहुँचाने का काम करेगी।

[घ] – इस सघन तश्तरी में विशोधन के लिए भी अनेक वैज्ञानिक सुविधाएं उपलब्ध हैं। मसलन इसमें ऐसे प्रोग्राम दिए गए हैं, जिनसे कोई भी शोध-विद्यार्थी किसी भी शब्द को इस विशाल साहित्य में जहां-जहां हैं, वहां-वहां आसानी से ढूंढ सकता है।

[ङ] –इस सघन तश्तरी की एक और महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें पालि-हिंदी शब्द-कोश को भी निवेशित किया गया है। यह उन भारतीयों के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध होगा जो कि तथागत बुद्ध की पावन शिक्षा, उनकी मातृभाषा मूल पालि में पढ़ना चाहते हैं। यद्यपि आज के भारत में पालि भाषा का प्रयोग लुप्तप्राय हो चुका है, तथापि इस शब्द कोश की सहायता से अनेक लोगों को इसे समझ सकने में बहुत सहायता मिलेगी, क्योंकि प्राचीन पालि भाषा आज के उत्तर भारत की अधिकांश भाषाओं के बहुत समीप है।

[च] –यह सघन तश्तरी केवल भारत और म्यंमा में ही नहीं बल्कि सारे विश्व में जिन्हें भी इसकी आवश्यकता होगी, उन्हें निःशुल्क प्रदान की जायगी, ताकि भारत के इस महान ऐतिहासिक महापुरुष की कल्याणी वाणी अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचे और उनके हित-सुख में सहायक बने। जैसे कि विपश्यना विद्या लोगों को निःशुल्क बांटी जाती है वैसे ही सघन तश्तरी भी निःशुल्क बांटे जाने की शुद्ध पुरातन परंपरा का पालन किया जायगा।

तिपिटक तथा उसके भाष्य और टीकाओं के ग्रंथों तथा इस सघन तश्तरी के प्रकाशन द्वारा यह आशा की जा सकती है कि भारत का यह बहुमूल्य साहित्य दुखियारे मानव-समाज के लाभार्थ अनेक भावी सहस्त्राब्दियों तक कायम रहेगा।

भारत में हुए पहले तीन संगायनों में बुद्धवाणी व तत्संबंधी साहित्य को कंठस्थ करके पठन-पाठन द्वारा जीवित रखा गया। श्रीलंका में हुए चौथे संगायन में पहली बार यह साहित्य ताड़-पत्रों पर लिखा गया, क्योंकि उस समय तक लेखन के लिए वही सामग्री उपलब्ध थी। पांचवां संगायन म्यंमा में हुआ जहां कि यह सारा साहित्य संगमरमर के सिलापट्टों पर अंकित किया गया, ताकि अधिक समय तक कायम रह सके। छठा संगायन भी म्यंमा में ही हुआ, जब कि यह संपूर्ण साहित्य पुस्तकों के रूप में मुद्रित और प्रकाशित किया गया, जिससे कि अधिक से अधिक लोग इसका लाभ उठा सकें।

और आज के युग की वैज्ञानिक और तकनीकी उपलब्धियों का लाभ उठा कर अब यह सघन तश्तरी तैयार की जा सकी है, जिसमें कि इतना वृहद साहित्य मात्र पांच इंच व्यास की पतली-सी तश्तरी पर अंकित कर दिया गया है। इस विशद साहित्य संग्रह की इस छोटी-सी तश्तरी को कोई व्यक्ति अपनी जेब में रख सकता है और जब चाहे तब 'परसनल कंप्युटर' द्वारा इसका उपयोग कर सकता है। यह कंप्युटर भी आज कल इतनी छोटी साइज में बनने लगा है कि इसे एक सामान्य ब्रीफकेस में अपने साथ रखा जा सकता है।

भारत की इस गौरव गरिमामय आध्यात्मिक धरोहर ने पुरातन काल में दुखियारी मानवता को बहुत लाभान्वित किया था। आज फिर एक बार इस महान देश की ओर से यह अमोघ औषधि दुखियारे मानवी समाज को सुख-शांतिमय स्वास्थ्य प्रदान करे, सारे विश्व में धर्म के नाम पर चल रहे नृशंस आतंकवादी अत्याचारों को दूर करके व्यक्ति-व्यक्ति में और समग्र मानवी समाज में पारस्परिक सौहार्द्र, सहानुभूति और सहयोग का धर्मबल प्रदान करे।

महान भारत की पुरातन आध्यात्म प्रभा विश्व भर के अंधकार को दूर करती हुई एक बार पुनः उदीयमान हो और सकल विश्व के लिए शांति और समृद्धि प्रदान करती हुई अनेकों के हित-सुख का कारण बने।

भवतु सब्ब मंगलं!

मंगल मित्र,
सत्यनारायण गोयन्का.